स्वामी दयानन्दजी

बालोपयोगी जीवनी

चमूपतिजी

हमारे स्वामी

स्वामी दयानन्द जी की
बालोपयोगिनी जीवनी

* ओ३म् *

हमारे-स्वामी

स्वामी दयानन्द जी की बालोपयोगिनी जीवनी ।

जो कन्या पाठशालाओं तथा आर्य्य स्कूलों के लिए स्वीकृत हो चुकी है ।

लेखक—

श्री पं० चमूपति जी एम० ए०

प्रकाशक—

राजपाल एण्ड संज़

आर्य्य पुस्तकालय व सरस्वती आश्रम,
अनारकली, लाहौर ।

११वीं बार] जनवरी १९३८ [मूल्य ।=)

ऐङ्गलो ओरियण्टल प्रैस, कृष्णा गली नं० ६ रेलवे रोड लाहौर ।

विषय-सूची ।

—:o:o:—

बच्चों के लिए मनोहर पुस्तकें

प्रत्येक माता-पिता का कर्तव्य है कि वह अपने बच्चों के लिए बाज़ारी खिलौनों की अपेक्षा निम्नलिखित सच्चे खिलौने उपहार रूप में अवश्य खरीद कर दें, जिस से कि उनके कोमल हृदयों पर इनके पढ़ने से शुभ संस्कार सदा के लिए प्रभुत्व जमा सकें, और अपने कुटुम्ब तथा देश के लिए उपयोगी सिद्ध होकर जीवन को सफल बना सकें।

बाल सत्यार्थ-प्रकाश

सत्यार्थ प्रकाश कैसा उत्तम ग्रंथ है, यह सभी जानते हैं, परन्तु आज तक उसका कोई ऐसा बाल-संस्करण नहीं छपा जो वैदिक सिद्धान्तों को स्पष्ट तथा संक्षेप में, बालकों के सामने रख सके। यह पुस्तक इसी कमी को पूरा करती है। इसके लेखक हैं—गुरुकुल काङ्गड़ी के गवर्नर श्री विश्वानाथ जी विद्यालंकार। तीसरा संस्करण अभी छपा है। टाईप मोटा, कागज़ बढ़िया और पुस्तक सचित्र है। मूल्य केवल ॥)

बाल महाभारत

महाभारत ज्ञान का भण्डार और शिक्षा का आगार है, परन्तु बच्चों के लिए कोई पुस्तक ऐसी न थी, जिसे वह भी पढ़ कर समझ सकते। इस पुस्तक में महाभारत की कथा है और इस कथा से जो २ शिक्षायें मिलती हैं, वह भी निकाल २ कर दिखाई हैं। पुस्तक बहुत रोचक है। मूल्य १)

मनोहर कहानियां

जैसा नाम है, वैसी ही पुस्तक है। कहानी एक से एक मज़ेदार, शिक्षा देने वाली और सरल है। प्रत्येक कहानी के आरम्भ में संस्कृत श्लोक दिया है, और उसकी व्याख्या भी कर दी है। पुस्तक तीसरी बार छपी है। मूल्य ॥।)

पारस

श्रीयुत सुदर्शन के नाम से कौन परिचित नहीं, कहानियां लिखने में तो वह कमाल ही कर देते हैं, यह पुस्तक इन की लिखी हुई कहानियों का बच्चों के लिए संग्रह है, जिसे बच्चे बड़े चाव से पढ़ते हैं। मूल्य ॥=)

बच्चों का प्यारा कृष्ण

श्री कृष्णचन्द्र की जीवन घटनायें बड़ी ही विचित्र हैं बच्चे उनसे बहुत कुछ सीख सकते हैं। मूल्य ॥)

अच्छी अच्छी कहानियां

इस पुस्तक में बच्चों के लिए सचमुच बहुत ही अच्छी अच्छी कहानियां लिखी गई हैं। बच्चे इन से बहुत सी शिक्षाएं ले सकते हैं। मूल्य ।-)

ब्रह्मचर्य्य

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने ब्रह्मचर्य्य पर बहुत से

अत्युत्तम भावप्रद भाषण दिए थे, यह पुस्तक उन ही भाषणों का संग्रह है। मूल्य केवल दो आना।

बाल सखा

इस पुस्तक में प्रार्थना, प्रातःकाल, सफाई, गाय, हिम्मती विद्या, उपदेश, वेद, बाज़ीगर, अनाथ बालक, हकीकत राय, माता का प्यार, शिवाजी, मेहनत का फल, स्वदेश, मेंडक, बन्दर, चूहे, बिल्ली इत्यादि पर सरल कविताएं दी गई हैं जो पढ़ते २ ही बच्चों को याद हो जाती हैं। मूल्य केवल ।-)

बालशिक्षा प्रथम तथा द्वितीय भाग

स्वामी दर्शनानन्द जी ने उन बच्चों के लिए जो पाठशाला में प्रथम पग ही धरते हैं इन पुस्तकों में वैदिक शिक्षा अनोखे व सरल ढंग से दी है, जिसका प्रभाव उनके हृदयों पर सदा के लिए बना रहता है। मूल्य १ भाग)॥। और दूसरा)॥

धर्म की पहली, दूसरी और तीसरी पुस्तक।

आजकल की स्कूली शिक्षा में धार्मिक शिक्षा का प्रायः अभाव होने के कारण हमारी सन्तान सदाचार और सत विचारों से सर्वथा शून्य होती है। यही सोच कर धर्म की पुस्तकें रची गई हैं। तीन भागों में छपी हैं। मूल्य =), ≡), और ।) प्रति भाग।

श्रवण कुमार

"माता पिता की सेवा करना पुत्र का मुख्य कर्त्तव्य है" इसी उक्ति को श्रवण ने सिद्ध कर दिखाया। यदि तुम श्रवण की पवित्र जीवनी से जानकार होना चाहते हो तो इस पुस्तक का अवश्य अवलोकन करो। सचित्र पुस्तक का मूल्य ।=)

बाल शिवा जी

बाल्यवस्था में ही शिवा जी ने क्या क्या कारनामे कर दिखाए? ऐसा जानने के लिए प्रत्येक बालक लालायित हो उठेगा। उन्हें यह पुस्तक अवश्य दें। वह इसे बड़े चाव से पढ़ेंगे। मोटे टाईप में बढ़िया कागज़ पर छपी पुस्तक का मूल्य केवल ।)

वीर अभिमन्यु

बच्चों को प्राचीन पुरुषों का इतिहास अध्ययन कराना अतीव आवश्यक है, इसी भाव से प्रेरित होकर यह पुस्तक प्रकाशित की गई है। कन्यायें तथा मातायें इस पुस्तक को पढ़ कर यह शिक्षा प्राप्त कर सकती हैं, कि पति और पत्नी का प्रेम कैसा होना चाहिए, और मातयें अपने वीर बालकों को प्रोत्साहित करके अपने कुल की मान मर्यादा को किस प्रकार बढ़ा सकती है। मोटा टाईप, रंगीन छपाई बढ़िया कागज़ सहित सचित्र पुस्तक का मूल्य ।)

महाराणा प्रताप

हिन्दी में एक छोटे सरल और प्रमाणिक महाराण प्रताप के जीवन के अभाव को पूरा करने के लिए ही यह पुस्तक लिखी गई है । इस में महाराणा प्रताप का जीवन चरित्र कहानियों के रूप में दिया गया है, इसे पढ़ कर बालक वीर बनने का प्रयत्न करेंगे। मोटा टाईप रंगीन सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज़ ५६ पृष्ठों की, सचित्र पुस्तक का मूल्य केवल तीन आना है ।

राजपाल एगड संज़,

सरस्वती आश्रम लाहौर ।

आवश्यक निवेदन

लड़कों तथा कन्याओं के लिए बढ़िया, सुन्दर और शिक्षाप्रद पुस्तकों का ताज़ा स्टाक हर समय हमारे पास मौजूद रहता है, जब कभी उनको इनाम देने अथवा लाइब्रेरियों के लिए अच्छी २ पुस्तकों की आवश्यता पड़े तो तुरन्त ही हमें लिखें। स्कूलों तथा पाठशालाओं को हम बड़ी कोशिश से तथा रियायत से पुस्तकें भेजा करते हैं।

बड़ा सूची पत्र मुफ्त मंगवावें।

राजपाल एण्ड संज,

आर्य्य पुस्तकालय व

सरस्वती आश्रम

अनारकली,

लाहौर।

भूमिका ।

मीजी का जीवन पढ़ना सच्चे आर्य बनने का साधन है। यदि बालकों को आर्य्य बनाना हो, तो स्वामी जी की जीवनी पढ़ा दो।

इस पुस्तक में स्वामी जी के जीवन से वे घटनाएं इकट्ठी की गई हैं, जिन्हें बालक तक समझ सकें।

घटनाएं उन सब प्रान्तों की हैं, जिन में स्वामी जी ने काम किया। यह इस लिए कि पाठक के मन पर स्वामीजी के कार्य क्षेत्र का चित्र खिंच जाए।

यदि घटनाओं का पूर्वा पर सम्बन्ध टूट जाए तो जीवन टूटी माला के दानों की भांति

बिखर जाता है। हमने तिथियाँ इस लिये नहीं दीं कि पाठक के लिए झंझट हो जाती हैं, पर क्रम ऐसा रक्खा है कि समय का आगा पीछा न बिगड़े।

यह पुस्तक बड़ा काम दे, यदि मुफ़्त बाँटी जाए, तथा इनाम में रखी जाए। समाज और स्कूल इस से प्रचार भी करें और इसे इनाम ठहरा कर संध्या, व्यायाम तथा सदाचार इत्यादि में बालकों की रुचि बढ़ाएँ। एक पन्थ दो काज।

* ओ३म् *

हमारे स्वामी

बड़े आदमी ।

ड़े आदमी दो प्रकार के होते हैं । एक धन के बड़े, दूसरे धर्म के बड़े । जो दोनों में बड़े हों, वे सब से बड़े हैं ।

ग़रीब का बालक परिश्रम से पढ़े, विद्वान् बने, बड़ी-बड़ी डिगरियाँ पाए और ऊँचे ओहदों पर पहुँचे । वहाँ योग्यता से काम करे, संसार में नाम पाए और भारत का नाम ऊँचा करे ।

इससे अच्छा वह धनवान् है जो धन धान्य छोड़* जङ्गल में जाए और तपस्या करे, विद्वानों से मिले, उनसे पढ़े, ज्ञानी बने, सच को पाए और संसार को सिखाए । ऐसा महापुरुष है । सचमुच वह स्वामियों का स्वामी और राजों का महाराजा है ।

स्वामी दयानन्द जी महाराज ऐसे ही महापुरुष थे ।
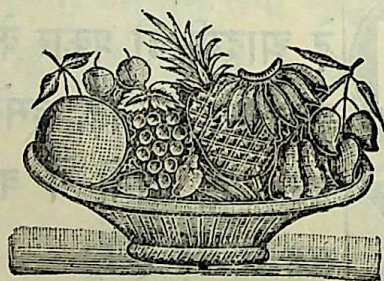
*स्वामी जी के समय गुरुकुल थे । उन्हें जंगलों में रहना और घूमना पड़ा । अब जंगल में रहने से अभिप्राय गुरुकुलों में रहना है ।

पूरे और अधूरे ।
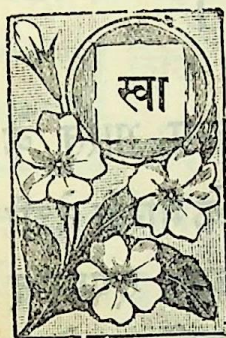
मी दयानन्द के शरीर को देखो ! कैसा सुडौल और बलवान् हैं । छाती उभरी हुई, आंखें चमकीली, सिर बड़ा, टांगें कड़ी, बाज़ू मोटे और सख्त ।

विद्या इतनी कि कोई बराबरी न कर सकता था । स्वामी जी के पुस्तक पढ़ो, विद्या के ख़ज़ाने हैं ।

तिस पर सदाचारी और सच्चे । बुरा कर्म भूल कर भी न करते । तुम इसी जीवन में सदाचार के नमूने देखना ।

बस ! जिस पुरुष व स्त्री में ये तीन गुण हों, अर्थात् शरीर का बल, विद्या और सदाचार, वह पूरा पुरुष वा स्त्री है, अन्य अधूरे हैं ।

स्वामी दयानन्द जी पूरे पुरुष थे, तुम भी

पूरे पुरुष बनना ।

सियाना बालक ।

जन्म

स्वामी दयानन्द का जन्म भारत के पश्चिम में गुजरात प्रांत के मोरवी देशी राज्य के टंकारा नाम ग्राम में हुआ । दयानन्द के पिता कृष्ण जी तिवारी बड़े ज़मींदार थे । सरकार की ओर से लगान (महसूल) की वसूली करते थे, जो हमारे यहां तहसीलदार करते हैं । इससे सरकार में उनका मान था । दयानन्द का जन्म "मूलशङ्कर" था ।

शिक्षा

दयानन्द ने पहले कुछ संस्कृत पढ़ी, फिर यजुर्वेद याद किया ।

कृष्ण जी शिव के उपासक थे और शिव-पुराण की कथा सुना करते थे । वे मूलजी को भी साथ ले जाते और शिव-पूजन की लड़ाई

बताया करते। इससे मूलजी की शिव में बड़ी श्रद्धा हो गई।

शिवरात्रि

शिव के उपासक शिवरात्रि को बड़ी रात्रि समझते हैं ब्रत रखने हैं। रात को जागते और दिन में निराहार (भूखे) रह कर शिव का पूजन करते हैं। इन प्रान्तों में फाल्गुण मास की अँधेरी चौदहवीं यह रात होती है, परन्तु गुजरात में माघ मास को अँधेरी चौदहवीं को शिवरात्रि मनाते हैं।

जब मूलशङ्कर की आयु (उमर) चौदह वर्ष की हुई, तो पिता ने सोचा कि अब इसे ब्रत रखना चाहिये। माता ने प्यार से रोका कि बालक छोटा है, कष्ट न उठा सकेगा। परन्तु मूलशङ्कर ने स्वयं ब्रत रखना मान लिया और पिता जी शिव-मन्दिर में साथ ले गए।

पहिला ब्रत था। कुछ चाह थी कुछ अचंभा

था। मूलजी ने ठाना, सारी रात जाग कर शिव को खुश करो। आधी रात होते होते सब पुजारी और उपासक सो गए। मूल के पिता ने भी लम्बी तानली। केवल मूल अकेला जागता रहा।

उद्धत चूहा

शिव-लिंग पर मिठाई धरी थी, फूल चढ़े थे, भीनी-भीनी-सुगन्धि थी। इतने में एक चूहा निकला। शिव-लिंग के इधर-उधर फिर, जैसे पुजारी परिक्रमा (फेरी) करता है। इधर मूल भी आंख न छपकाता था। फिर-फिरा कर चूहा चौकी पर चढ़ा और लगा अठखेलियां करने।

मूलजी हक्के बक्के! क्या यही शिव है? जो दैत्यों को मारता है? एक चूहा तो स से हटाया नहीं जाता। क्या कैलाश पर रहने वाला यही महादेव है? या इस चौकी

को ही कैलाश कहते हैं ? मैं इसके लिए क्यों जागूँ ? व्रत से क्या लाभ ? मूलशङ्कर के मन में शंकाओं का दरया बह गया। पिता को जगाया और उनसे प्रश्न किए, परन्तु सन्तोष देने वाला उत्तर न पाया। पिता से पूछ कर घर चले आए और कुछ खा पी कर सो रहे। शिव और चूहे की पहेली किसी ने न बुझाई।

भगिनी की मौत　　　　चचा की मौत
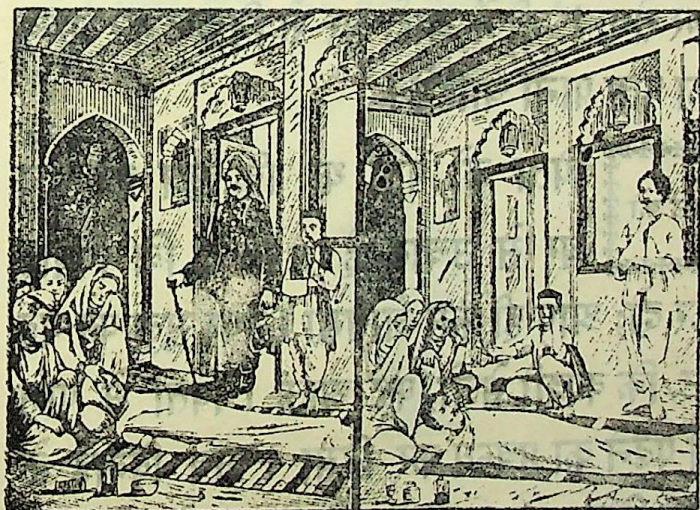
दो मौतें

कुछ समय पीछे मूलशंकर के घर में दो मौतें हुईं । सोलह वर्ष के थे कि भगिनी मर गई । सारा घर रोता रहा पर मूल पर शिव की पहेली सवार । वह इस सोच में थे कि मरना क्या होता है । एक आंसू भी आंखों से न निकाला । तीन वर्ष पीछे चचा ने प्राण दिये । उन से बहुत प्यार था । फूट फूट कर रोए । जी में आई, घर से निकल कर मृत्यु का पता पाना चाहिये ।

जंगल को

पिता को पता था कि पुत्र का मन घर से उचाट है । सोचा कि विवाह कर दो; आप ही फंस जायगा । उधर मूल का यह हठ, कि काशी भेजो, पढ़ आऊं । पिता ने पास ही पढ़ने का प्रबन्ध कर दिया । जब विवाह के दिन निकट (पास) आये तो मूल ने और तरह छुटकारा न देख, भाग जाने की ठानी और एक

दिन समय पाकर निकल गए ।

मूलशंकर ने दो नई बातें देखीं । एक शिव-लिंग पर चूहा चड़ा । दूसरे, घर में दो मौतें हुईं इसी से आंख खुल गई और सच की खोज में निकले ।

शिक्षा

सियाने बालक बात-बात पर विचार करते हैं । और सत्य को ढूंढ़ पाते हैं ।

ज्ञान का मार्ग

——:०:——

पकड़े गये

घर में कोलाहल मच गया, "मूल कहां गया ? मूल कहां गया" ! पिता ने खोज कराई सब ओर सिपाही भेजे आप भागे दौड़े। अन्त को एक महन्त के बताने से भागे हुए बालक का पता लग गया और सिद्धपुर के मेले में मूल जी पकड़े गये। कड़ा पहरा लगाया गया, पर मूल के मन में वही पहली धुन थी। पहरे वालों की आंख बचाई और फिर भागे। इस बार भी बहुतेरी ढूंढ हुई, पर मूल का पता न मिला।

वन पर्वत

मूलशङ्कर अभी नवयुवक था, फिर लड़का बड़े आदमी का ! घर के बाहिर अभी गया न था। निकलने को तो निकल आया, क्या पता था कि ज्ञान मार्ग कठिन है। कहीं साधुओं ने लूटा, कहीं चोरों ने ठग लिया। पास

पैसा न रहा । कहीं रात कहीं दिन। जी में यह डर कि कहीं फिर न पकड़ा जाऊं, बहुत देर तक मारा मारा फिरा। कहीं जङ्गल लांघा, कहीं पहाड़ों पर चढ़ा । जहां किसी महात्मा का नाम सुना, अपने तन की भूल गई । जिस तरह बना, वहां पहुंचा । इस तरह भांति-भांति की विद्या पढ़ी । योग विद्या की विशेष धुन रही। एक दक्षिणी स्वामी से सन्यास लिया, और तब से दयानन्द नाम हुआ।

कठिन यात्रा

गुजरात से नर्मदा, नर्मदा से अर्वली, अर्वली से उत्तरी भारत। एक जगह रीछ सामने हुआ। घनी झाड़ियों में से सांप की तरह लम्बे लेट कर गुज़रे, कांटों से शरीर छलनी हो गया । बर्फ के नाले में पांव सुन्न हो गए। खाने को कहीं पाव भर दूध और कहीं जङ्गली कन्दमूल ।

इस प्रकार के घोर कष्ट सहते हुए अनेक स्थानों में फिर आए। अनेक महात्माओं के दर्शन और मेल से लाभ उठाया। तब भी मन की शान्ति न हुई। कारण यह कि शिव-रात्रि की पहेली किसी ने न बुझाई।

पुस्तक प्राप्ति

उन दिनों पुस्तक न मिलते थे। छपी पुस्तकों का अभी रिवाज़ कम था। लिखी पुस्तक किसी के पास होती भी, तो सात कोठरियों में छिपा रखता। निर्धन सन्यासी में यह शक्ति कहां कि पुस्तक प्राप्त करे? न मूल्य से ले सकता था, न लिख ही सकता था। तथापि स्वामी दयानन्द ने इस में कितना परिश्रम किया? इस बात का हमें ध्यान नहीं आ सकता, क्योंकि हमें पुस्तक सहज ही में मिल जाते हैं।

शिक्षा

"विद्या की खोज में वन पर्वत एक कर दो"

सच झूठ की परख

क दिन गङ्गा के किनारे पुस्तक पढ़ रहे थे। मनुष्य की नाड़ी नसों का विषय था। वर्णन कुछ उलझा सा था। बात से बात न मिलती थी। बहुत यत्न करने पर भी समझ न आया तो सोचने लगे कि क्या करें? देखा तो एक शव बहा आता है। कपड़े उतार कर लंगोट कस लिया और दरिया में कूद पड़े। शव को हाथ से पकड़ कर किनारे पर लाए और छुरी निकाल कर उसे चीरने फाड़ने लगे। डाक्टरों की तरह हृदय देखा, कलेजा और सिर काट कर देखा। पुस्तक की एक बात भी उस मृत शरीर

में न पाई। वहीं पुस्तक को फाड़ कर शव के साथ बहा दिया।

शिक्षा

पुस्तकों की परख अनुभव से करो। विद्या के लिए शव चीरना तक धर्म्म है।

शिष्य-भाव

तने पर भी जब ज्ञान की कली न खिली और शिवरात्रि की गुत्थी वैसी की वैसी उलझी रही, तो चिंता में डूबे रहने लगे। पता लगा कि मथुरा में एक प्रज्ञा-चक्षु (अन्धे) स्वामी रहते हैं। उन्हें दंडी विरजानन्द कहते हैं। वे वेद और व्याकरण के विद्वान् हैं। जी में आई चलो, उनके भी पाँव धो देखो। क्या पता वहीं मनोरथ सिद्ध हो जाए।

पुस्तकें यमुना में फेंक दीं

यह सोच मथुरा गये और यमुना के किनारे दण्डी का दरवाज़ा खटखटाया। दण्डी जी के यहाँ
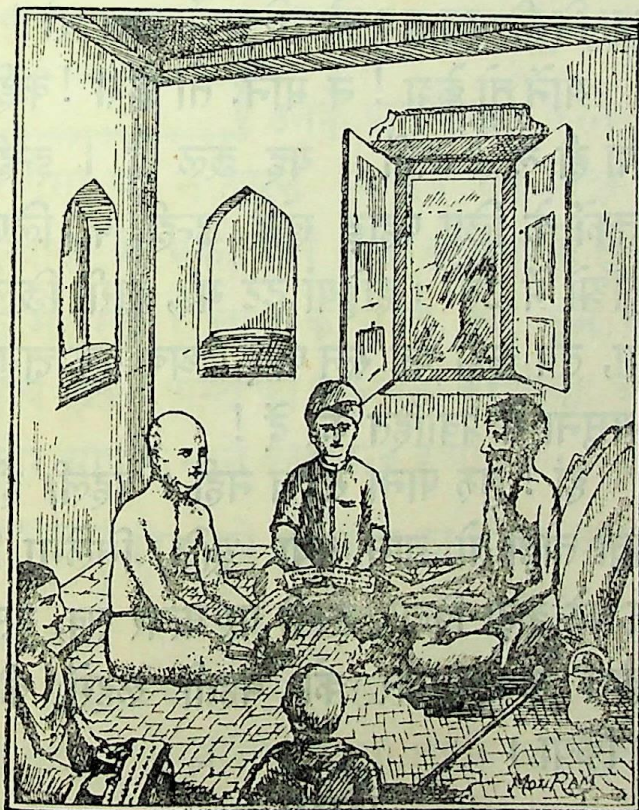
स्वामी दयानन्द गुरु से पढ़ रहे हैं।

पठन पाठन रहता था। दयानन्द से पूछा—क्या पढ़े हो ? आपने किताबों के नाम कह सुनाए। फिर पूछा—यह पुस्तकें पास हैं ? "हां" कहने पर आज्ञा मिली—इन सब को दरिया में डाल दो।

मानें तो क्लेश ! न मानें, तो क्लेश ! कहीं छिपा ही लें ? नहीं। यह छल है। इन्हीं पुस्तकों के लिए पहाड़ खोदे, इन्हीं के लिए गुफ़ाओं में उतरे। हड्डियां टूट गईं, शरीर छिल गया, तब कहीं यह रत्न पाए। अब एक क्षण में यमुना में प्रवाहित कर दें !

हां ! गुरु पाना सहल नहीं। पहली ही आज्ञा तोड़ी तो ज्ञान क्या धूलि मिलेगा ? मन को कड़ा किया, छाती पर पत्थर रख, उस अज्ञान के भण्डार को बहती लहरों की भेंट किया।

शिक्षा

गुरु की आज़ा सिर आंखों पर रक्खो।

विद्यार्थी-जीवन

—:०:—

भोजन और स्थान

दयानन्द निर्धन तो थे ही! उनके पास भोजन करने को न पैसा था, न ठहरने स्थान। एक मंदिर के दरवाज़े में एक ओर तंग कुठरिया में सुकड़ के सो रहते। खाने के समय कुछ भुने चने चाब लेते। अन्त को एक धनी को दया आई और आप के खाने का प्रबन्ध हुआ।

तल

दिन को तो सूर्य्य का दीपक जलत था। रात को क्या करें! पैसा नहीं कि तेल लें और दिया जलाएं। स्त्रियां दीवारों में कपास की बत्तियां जला जातीं या चौराहों में मिट्टी का दीया जला जातीं। यह उन दीयों और बत्तियों को इकट्ठा करते और

पढ़ते । अन्त को किसी और धनी की दया से तेल का प्रबन्ध भी हो गया ।

गुरु की सेवा

स्वामी जी दंडी जी के शिष्य तो बन ही गये थे । गुरु का नियम था कि नित्य यमुना के ताज़े जल से स्नान करते । पानी लाने का काम दयानन्द को मिला था । सो गरमी हो, सरदी हो, आंधी हो, वर्षा हो, दयानन्द इस गुरु-सेवा से कभी न चूके ।

गुरु की लात

गुरु की कुटी में झाड़ू भी दयानन्द ही दिया करते थे । एक दिन झाड़ू देकर कूड़ा एक ओर रख बाहिर फैंकने के लिए टोकरी देख रहे थे कि श्री विरजानन्द की टांग कूड़े पर जा पड़ी । गुरु जी क्रोध में आ गए और दयानन्द को ज़ोर से लात मार

दी । आप कुछ समय पीछे वह टांग दबाने जा बैठे और नम्रता से कहा—"मेरे तन मन के स्वामिन् ! मेरा शरीर तो तपस्या से पत्थर हो गया है । आप की लात दुखती होगी" ।

शिक्षा

विद्या का साधन तप है । गुरु की ताड़ना शिष्य की शिक्षा का साधन है ।
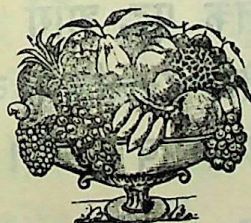
गुरु दक्षिणा

वेदों की शिक्षा

सच पूछो तो पुस्तकें नदी में फेंकवा कर दंडी ने अज्ञान का भार स्वामी के हृदय से उतार दिया। तब से लगे उन्हें वेद के अर्थ बताने–"बेटा ! यह ज्ञान ईश्वर का दिया है। दूसरे पुस्तक पुरुषों ने बनाए हैं। उनमें भी ऋषियों का लिखा वेद के अनुकूल सत्य है; और लोगों ने गप्पें हाँकी हैं, तू सच्चे वेद ही को मान, ऋषियों के पुस्तक पढ़, औरों पर विश्वास न कर। वेद कसौटी हैं—जिसे वह सच्चा कहें, वह सच्चा है, अन्य सब झूठे"।

दयानन्द को इस शिक्षा ने अपूर्व आनन्द दिया। रोज़ के उपदेश से बुद्धि शुद्ध हो गई।

एक शिवरात्रि क्या, सारे जीवन की ग्रन्थियाँ सुलझ गईं। परम शान्ति को पा, उस दिन को धन्यवाद दिया, जब दण्डी का दरवाज़ा खटखटाया था।

समावर्तन

दण्डी ने देखा, कि अब चेले विद्वान् हुए। खोटे खरे को जान गए, सत्य असत्य को पहचान गए। एक दिन समावर्तन का नियत किया, कि शास्त्र की रीति से शिष्यों की शिक्षा पूरी करेंगे।

सब विद्यार्थी गुरु जी के लिए भेंट लेने गए। दयानन्द को कुछ लौंङ्ग मिले, वे ही गुरु के चरणों में रखकर विनय की:—"महाराज! लौंग छोटी चीज़ है, पर और कुछ मिला नहीं, क्या भेंट करूं?"

गुरु प्रसन्न थे कि जीवन कार्य पूरा
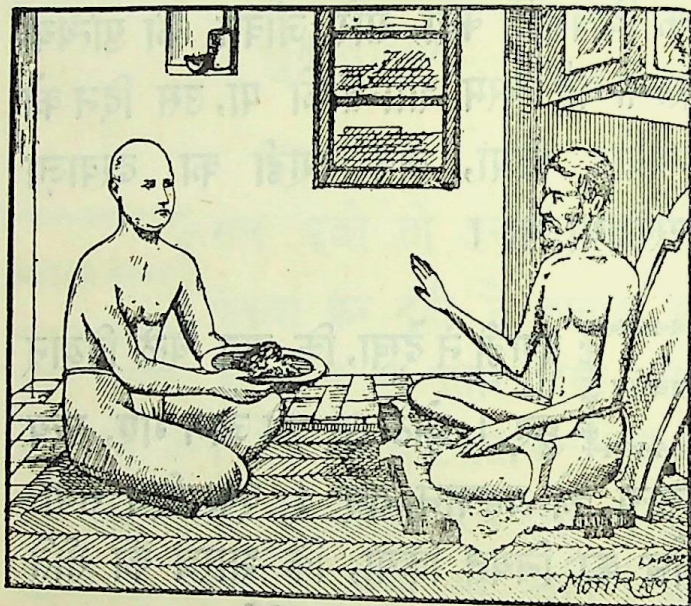
गुरु को भेंट दे रहे हैं।

हुआ। कहा–बेटा ! तुम्हारी भेंट क्या है, जो लूं ? मुझे तो कुछ और चाहिए। मैंने जो ज्ञान दिया, उसे सफल करो। संसार वेदों को भूल गया है, तुम फिर उसे वेद की शिक्षा दो। घर-बार छोड़ो, खुले मैदान तुम्हारा घर है। भूमि को सेज समझो, पत्थर का

सिरहाना बनाओ, आप दुःख उठाओ, संसार को सुख दो। कौन है जो मुझे यह दक्षिणा देगा ?"

स्वामी पहिले ही त्यागी थे। कुछ सहमे भी कि काम कठिन है। गुरु ने साहस दिया, टूटते हृदय ने शक्ति पाई। कहा—"परमपूज्य गुरुवर ! परमात्मा आपका एक-एक अक्षर सच्चा करे। दयानन्द अपने तन, मन, की दक्षिणा देता है"।

अन्धी आंखों ने ज्योति पाई। गुरु ने आशीर्वाद देकर शिष्य को छुट्टी दी।

शिक्षा:--

विद्या की सफलता विद्या-दान से होती है।

कुंभ का मेला या छोटा भारत।

मी जी उनतालीस ३९ वर्ष के थे, जब गुरु की कुटी से निकले। सारा संसार सामने था और गुरु की शिक्षा मन में। चार वर्ष आगरे, ग्वालियर, पुष्कर आदि स्थानों में फिरे। स्वामी जी ने देखा कि लोग पुराणों को अपनी धर्म्म पुस्तक मानते हैं, वेद का नाम भी कोई नहीं जानता। पुराणों में भी भागवत पुराण का बड़ा प्रचार है।

बस फिर क्या था, इस पुराण के पीछे लट्ठ उठा लिया। बुरी पुस्तक होने से सदैव इसकी निन्दा करते और इसे छोड़ने पर बल देते।

उसी वर्ष हरिद्वार में कुम्भ का मेला था। यह मेला हर बारहवें वर्ष होता है। भारत

भर के नर नारी इकट्ठे होते हैं। भीड़ इतनी कि तिल धरने को स्थान नहीं होता। स्वामी जी ने जाना प्रचार का अच्छा मौका है। समय आते ही वहां जा विराजे।

हरिद्वार से यात्री हृषीकेश को जाते हैं। हृषीकेश साधुओं का स्थान है। उसी रास्ते में स्वामी जी ने अपना झण्डा गाड़ा। उस पर लिखा था "पाखण्ड खण्डिनी पताका"—अर्थात् झूठमूठ को झंझोड़ कर धर देने वाली झण्डी।

लोग हर की पौड़ी पर स्नान करके समझते हमारे जीवन भर के पाप धुल गए। यहां पहुंचते, तो वह भ्रम ही धुल जाता। यहां तो उपदेश होता कि हर की पौड़ी पर नहाने से कुछ नहीं बनता। अच्छे कर्म करो, वेद की शिक्षा पर चलो! यही पुण्य है, यही तीर्थ है"।

कुम्भ पर आकर स्वामीजी ने भारत का एक छोटा सा चित्र देख लिया । साधुओं के कई रंग थे । सब से बुरे नांगे थे, जो लंगोटे तक न पहिनते थे । न उन्हें स्त्री की लज्जा थी, न पुरुष की । बैठे कुचेष्टा करते रहते । वैरागी, उदासी, निर्मले और न जाने कितने प्रकार के और साधु थे । इन्हें पहिले नहाने का हठ था, पोलीस न होती तो दंगा करते । महन्त और गद्दीदार हाथियों पर चढ़ कर आए, ठाठ राजों से भी बढ़ कर था । जो पूछो तो त्यागी हैं ।

पराडे चारों और जिस तरह बनता, हाथ जोड़ कर, डर दिखा कर, लजा कर,—यात्रियों से रुपये मार रहे थे। ये यहां के ब्राह्मण थे।

चोरी चकारी का खुला मौका था । कई जेबें कतरी गईं, बच्चे गुम हो गए, लड़कियां खो गईं ।

मातायें मुंह सिर पीट कर रह गईं।

एक हर की पौड़ी की डुबकी के लिए कितने अनर्थ हुए। कई आदमी भीड़ में कुचले गए। नहाते नहाते किसी का पांव जा फिसला तो गंगा की गोद में जा गिरा।

यह सब कुछ क्या था? इस लिए कि लोगों ने पानी में पुराय समझा है। एक विशेष पौड़ी पर नहाने को धर्म जाना है, और फिर उसका भी एक ही दिन नियत किया है।

स्वामी ने सब ओर आंख दौड़ाई, सारे भारत को भ्रम में डूबा पाया। इतने पाखराड का खराडन एक पताका क्या करेगी? विरजानन्दजी की बात सच्ची पाई कि संसार वेद को भूल गया है। भूला भी बुरी तरह है। अपने अन्दर दृष्टि डाली—कि क्या मैं इस हर की पौड़ी में डूबतों को वेद के किनारे लगा सकूँगा?

लंगोट बन्द दयानन्द की प्रतिज्ञा

व्रत किया कि एक लंगोट के सिवाय अब

कुछ पास न रक्खूंगा। यह मेरा ओढ़ना है, यही मेरा पहिरना है। ईश्वर के चिन्तन से शक्ति बढ़ाऊंगा। अन्त में वह दिन आएगा जब झूठ का कोट गिरेगा और सच की जय होगी।

यह कह स्वामी जी जङ्गल को चले गए और तप में मस्त रहने लगे।

शिक्षाः—

बड़े झूठ का नाश बड़ी तपस्या से होता है।

तपा हुआ शरीर।

[१]

क रात गङ्गा के किनारे चांदनी चिटकी हुई थी। माघ महीने की ठराडी हवा शरीर में से छेद करती निकली जाती थी। भारी २ पश्मीनें और लिहाफों में लोग ठराड के मारे कांप रहे थे। इतने में बदायूँ के कलैक्टर महाशय एक पादरी को साथ लिए गंगा पर आ निकले। देखा तो ठँडी रेत पर एक योगी आसन लगाए ध्यान में मस्त बैठा है। पास गए, तो योगी की आंख खुल गई। योगी ने केवल लंगोट ही पहिना हुआ था।

कलैक्टर-साधु जी! आपको ठंड नहीं लगती?

पादरी--खाने को खीर आदि बल देने वाला तरमाल मिल जाता होगा, ठंड लगे तो क्योंकर!

योगी-(मुस्करा कर) बाबा! अराडे मांसादि तो तुम्हारा खाना है। हम रूखी चपाती खाने वाले क्या माल उड़ाएंगे। खाने ही से ठराड का बचाव होता हो, तो ज़रा कोट उतार कर मेरे पास बैठ जाइये।

कलैक्टर—(पादरी को चुप कराकर) फिर क्या बात है?

योगी-बात और क्या है? आपका मुंह भी तो नङ्गा है, इसे ठराड क्यों नहीं लगती?

कलैक्टर—मुंह हमेशा नंगा रहता है, इस लिये इसे ठराड नहीं लगती!

योगी-हमारा सारा शरीर ही नंगा रहता है।

कलैक्टर-प्रणाम करके चल दिये।

[२]

ऐसे ही एक बार और माघ की ठराड में उपदेश कर रहे थे। सुनने वाले भारी-भारी

दोशालों में कांपे जाते थे। यह एक लंगोटे में ही मौज में थे। किसी ने कारण पूछा, तो कहा 'योग का अभ्यास है'।

किसी ने कहा—'कुछ इससे अधिक दिखाइये'। स्वामी जी ने अंगूठे घुटनों पर रख कर बल लगाया तो सारे शरीर से टप-टप पसीना गिरने लगा। यह देख कर सब अचम्भे में थे कि हैं! इस ठण्ड में पसीना?

शिक्षा—

तपे हुए शरीर पर सर्दी-गर्मी का क्या काम?

छूत-अछूत

—:०:—

[१]

नूपशहर में उपदेश कर रहे थे । उमेदा नाई भोजन का थाल लाया। स्वामीजी उसे प्रेम पूर्वक सभा ही में खाने लगे । कुछ ब्राह्मण बैठे थे;उन्होंने शोर मचा दिया—'यह क्या ? नाई भ्रष्ट है । उस के यहां का भोजन सन्यासी को नहीं करना चाहिये'।

स्वामी जी हंसे, और कहा-'रोटी तो गेहूं का है। नाई का इसमें क्या है ! शुद्ध पवित्र भोजन चाहे कोई लाए खा लेना चाहिये'।

[२]

बम्बई में स्वामी के डेरे पर एक बङ्गाली आया। बातचीत करते करते उसने पानी मांगा । बङ्गाली

की दाढ़ी लम्बी थी। भक्तों ने समझा, कोई मुसलमान है। उसे गिलास की जगह पत्तों के दोने में पानी दिया। स्वामी जी भड़क उठे, और भक्त को डांट कर कहा—"कोई किसी जाति का हो, उस का यह अनादर क्यों करो कि गिलास तक न दो? यही तो कारण है कि इस जाति ने गँवाए लाखों करोड़ों हैं, परन्तु अपने में मिलाया एक भी नहीं।"

शिक्षा—

१—मनुष्य से छिः छिः करने वाले स्वयं छिः छिः करने योग्य हैं।

२—आदर से पराये अपने बनते हैं, निरादर से अपने पराए।

निडर सन्यासी

—:o:—

कुम्भ के पश्चात् कौपीन-मात्र पहिने स्वामी जी गङ्गा के किनारे विचरने लगे। उपदेश यही था—'गङ्गा स्नान कुछ नहीं। पानी से शरीर की तो सफाई होती है, पर आत्मा की नहीं। कंठी तिलक में क्या धरा है? इन निशानियों से जाति में फूट आई है। ईश्वर का अवतार नहीं होता; जो सब जगह है, वह एक आकार में कैसे आए?" इत्यादि।

कई लोग इन सच्ची बातों को न सहकर स्वामीजी के शत्रु हो गए, परन्तु सच्चे को डर किसका था!

[१]

नदी में डाल दिया

एक बार विरोधियों ने सलाह की-इन्हें दरिया में डाल दो।

रातके समय एक अचेत सोते फ़कीर को यह जान कर कि दयानन्द है, गङ्गा में फेंक दिया। उसने चीख मारी, तो पता लगा, यह कोई और है। तब धूर्तों ने उसे निकाल लिया।

[२]

मगरमच्छ

एक दिन गङ्गा नदी में इस प्रकार लेटे थे कि आधा शरीर पानी के अन्दर था और आधा बाहिर। पास ही एक मगर मच्छ निकल आया। देखने वालों ने शोर मचाया। स्वामी जी वैसे ही लेटे रहे और कहा– "जब हम उसे कुछ नहीं कहते तो वह हमें क्यों छेड़ेगा?" इतने में मगरमच्छ गुम हो गया।

[३]

पान में विष

अनूपशहर में किसी ने पान में विष दी। चबाने से पता लगा तो न्योली

कर्म किया, और विष निकाल दी। सय्यद मुहम्मद तहसीलदार आप का भक्त था। वह था तो मुसलमान, पर इससे क्या? उसने हत्यारे को पकड़ा और बंदी गृह में डाल दिया। कुछ समय पीछे स्वामी जी की सेवा मे आया तो स्वामी जी क्रुद्धित हुए और कहा—

"मैं संसार को कैद कराने नहीं आया हूं। कैद से छुड़ाने आया हूं"। यह सुनते ही तहसीलदार ने उसे छोड़ दिया। दयानन्द की दया देखना। हत्यारे से भी वैर नहीं रक्खा।

[४]

राव का वार

जब आप कर्णवास में थे, विरोली के ठाकुर रणवीरसिंह गंगा स्नान के लिये वहां आए। एक रात उन्हों ने रासमण्डल किया, और स्वामी जी को रास में पधारने के लिए बुलाया।

स्वामी जी ने रास को नीच कर्म बताया और कहा "यह कैसे धूर्त हैं ! अपने बड़ों के स्वांग निकालते और स्त्रियों सहित नचाते हैं ! अपनी मां-बेटियों से भी ऐसा करें तो पता लगे ।"

राव कर्णसिंह को क्रोध आया, और वह कई सेवक साथ लिए स्वामी के स्थान पर पहुंचा । आंखें लाल-लाल और मुंह से गालियों की बौछाड़ । स्वामी जी हंसते रहे, पर सच कहने से न टले !

एक सेवक ने स्वामी जी पर हाथ बढ़ाया तो स्वामी जी ने बैठे-बैठे उसे धक्का दिया और वह पीछे जा पड़ा !

अब राव साहिब ने तलवार निकाली ! स्वामी जी ने ललकारा कि क्षत्रिय धर्म्म यह है-या शस्त्र न निकाले और यदि निकाले तो फिर उस समय म्यान में डाले जब शत्रु को मार ले !

राव ने हाथ उठाया ही था कि स्वामी ने गरज कर तलवार छीन ली और भूमि पर एक हाथ से ऐसे ज़ोर से टेका कि टुकड़े-टुकड़े हो गई।
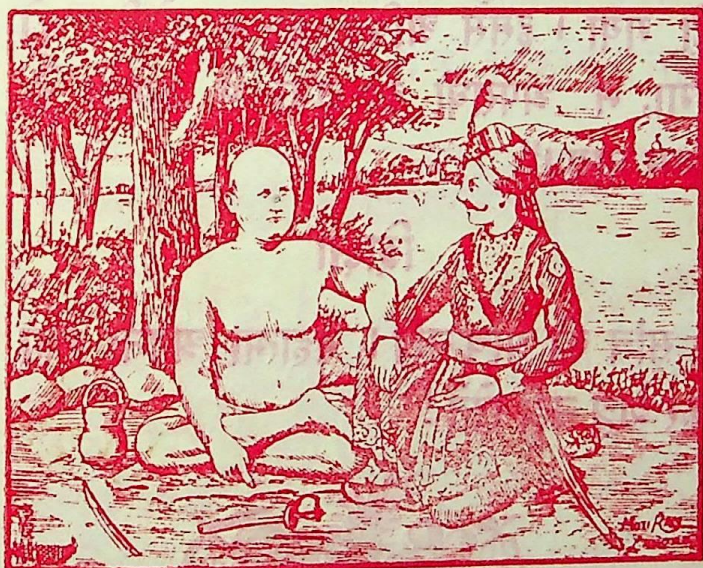
तलवार के दो टुकड़े कर दिये

राव कर्णसिंह को अब अपनी भी सुध न रही। वह तो झट भयभीत होकर भागा।

सबने कहा-पोलीस में पकड़वाओ। स्वामीजी

ने उत्तर दिया-"उसने क्षत्रिय-धर्म छोड़ा, तो क्या मैं भी ब्राह्मण-धर्म्म को छोड़ दूँ । मेरा धर्म्म है अपने आप को बचाना, सो विना पोलीस के हो गया । इससे अधिक कष्ट न पोलीस को दूंगा, न अपराधी को-क्षमा से सम्भव है, सुधर जाय ।"

शिक्षा

सांच को आंच नहीं । महात्मा अपनी रक्षा कर शत्रु नहीं होते !

सच की जय

जब स्वामीजी पर न विष चला सका, न तलवार, तो लोगों को इसके बिना चारा

शास्त्रार्थ हो रहा है ।

न रहा, कि पंडित मंगा कर स्वामीजी से शास्त्रार्थ

द्वारा सच का निर्णय करें। बहुत स्थानों पर तो रामरौला ही मचता रहा, परन्तु जब दूसरी वार कर्णवास में आए तो पंडित हीरावल्लभ से शास्त्रार्थ हुआ।

संस्कृत प्रवाह

इन पंडित जी को सामवेद और यजुर्वेद याद थे। आप विद्वान् भी बड़े थे। मूर्तियां सिंहासन पर लेकर बैठे थे, कि स्वामी जी से इन्हें भोग लगवाऊंगा, तब उठूंगा। इन्हें सहायता देने को और पंडित भी साथ थे। सात दिन धड़ाधड़ संस्कृत में संवाद हुआ। किसी दिन छः घंटे, किसी दिन नौ घंटे। अन्त को पण्डित जी ने माना, कि स्वामी जी पूर्ण विद्वान् हैं, और सच कहते हैं—कि मूर्ति-पूजा वेद-विरुद्ध है।

ठाकुर प्रवाह

यह कह कर ठाकुर उठा गंगा में फेंक दिये। इनकी देखा देखी और भी बहुतों ने अपने-अपने ठाकुरों को गंगा-प्रवाह का अन्तिम स्नान कराया।

ऐसे ही और स्थानों में भी अनेक मूर्तियां गङ्गा मय्या की भेंट हुईं।

यह तो हुआ मूर्तियों का हाल, अब मन्दिरों का सुनिए।

मन्दिर से पाठशाला

फ़रुखाबाद में ला० बंसीलाल ने मन्दिर बनवाया। उस में शिव-लिंग की स्थापना होनी थी। इधर स्वामी जी के उपदेशों की धूम थी। विद्वान् हार रहे थे। समझदार मूर्ति-पूजा से विमुख हो रहे थे। लाला जी ने निश्चित किया कि मंदिर पर

लगा हुआ रुपया निकम्मा जायगा, इससे एक पत्थर ही पर ताला रहेगा, और होगा क्या? स्वामी जी की आज्ञा लेकर उस मन्दिर की पाठशाला बना दी।

शिक्षाः—

मूर्ति-पूजा वेद-विरुद्ध है। शिवालयों की जगह पाठशालाएं खुल जाएं तो उत्तम है।

काशी विजय।

—:o:—

हिन्दू लोग काशी को जाते हैं। अंग्रेज़ी उर्दू पढ़े उसे बनारस कहते हैं। वहां संस्कृत के बड़े परिडत रहते हैं। फिर भी धर्म का बुरा हाल है। काशी की कहावत है—"जेते शङ्कर तेते कंकर" एक-एक पत्थर को परमात्मा कर पूजते हैं। वह पाप कौनसा है, जिस की काशी में बहुतायत न हो ? चोरी, ठगी, व्यभिचार सब कुछ वहां होता है। फिर भी काशी पूज्य-भूमि कहलाती है।

काशी की पत्री

जब और स्थानों के परिडत एक २ करके हारते गए, तो अन्त समय काशी याद आई। वहां से एक पत्री लिखा लाए कि मूर्ति, तिलक, अवतार, सब ठीक हैं।

स्वामी जी ने पत्री पढ़ी तो समझ गए कि काशी के ढोल भी दूर ही से सुहावने लगते हैं। झट ठान ली कि पौराणिक गढ़ को भी वेद के नाद से हिला के छोड़ेंगे। फिर क्या था! थोड़े ही दिनों में भ्रमण करते वहां जा पहुंचे।

शहर में कोलाहल मच गया, कि एक लंगोटधारी साधु काशी में ऐसा आया है, जो संस्कृत बोलता और ठाकुरों की निन्दा करता है। राजा ने स्वामी जी को बुलाया। पर स्वामी जी न आए। अन्त को शहर के बड़े २ पण्डित इकट्ठे हुए और राजा के प्रबन्ध से शास्त्रार्थ की ठहरी, सो सुनों।

शास्त्रार्थ

शास्त्रार्थ क्या था! सारी काशी एक तरफ़ हमारा सन्यासी एक तरफ़। स्वामी जी केवल लंगोट धारण किए चौकी पर बैठे थे। शरीर का तेज ऐसा कि मानों

सभा का शिरमौर यही है। सामने भारत भर के परम पूज्य पण्डित, पगड़ियां बांध, तिलक लगाए, चोगे पहन विराजमान थे। काशी के राजा सभापति थे। सो भी मूर्ति-पूजक और मूर्ति-पूजकों के संरक्षक! बात चली और प्रश्न-उत्तर हुए। मूर्ति-पूजा वेद से सिद्ध न हुई। इधर-उधर के प्रश्न किए गए कि समय टल जाए। एक पण्डित ने दो फटे पत्र आगे किए कि देखो यह वेद हैं। वह पत्र वेद के न थे। स्वामी देख ही रहे थे, कि ताली पिट गई, और सारी सभा उठ खड़ी हुई।

धूर्तों ने ऊधम मचाया। शरारत करते, पर पोलीस ने न करने दी। समझने वाले समझ गए कि काशी खोखली है। पण्डितों ने भी जाना, कि यदि एक साधु सत्य का पक्ष लेकर आए तो हमारी शेखी किरकिरी कर सकता है।

स्वामी का साहस सराहनीय है कि अकेला, बिना किसी सहायता के, विपत्तियों के अड्डे में जा बैठा, और अपने अनोखे विद्या-बल से काशी जैसे गढ़ को हिला दिया ।

स्वामी जी की यह सब से बड़ी फतह थी, क्योंकि काशी भारत की धार्मिक राजधानी है। इसे जीता, तो मानो भारत भर को जीत लिया ।

फिर कई बार यहां आए, और शास्त्रार्थ की घोषणा की, पर किसी को आगे आने का साहस न हुआ ।

शिक्षा—

सत्य ही सब से बड़ी सेना है ।

ब्रह्मचारी का बल।

—:०:—

मी जी का शरीर तसवीर में भी बोल रहा है। उसका रंग रूप ही बता रहा है कि मैं बल का भण्डार हूं।

[१]

मिर्ज़ापुर में पगडंडी पर जाते हुए एक सांड सामने आ गया। साथ वाले भाग गए, पर स्वामी जी छाती ताने खड़े रहे। सांड मार्ग छोड़ कर एक ओर हो लिया। किसी ने पूछा—सांड सींग मारता तो?

स्वामीजी—इन हाथों से हटा देते!

[२]

कर्णवास में राव कर्णसिंह का पहिला वार तुम्हें याद होगा। फिर वहां गए तो वह भी वहां

था । अब के स्वयं आने का साहस न हुआ । रात को रुपये का लालच देकर एक सेवक भेजा कि स्वामी का सिर उतार लाए ।

स्वामी जी इन दिनों में भी एक लंगोट ही में रहते थे सर्दी के दिन ! दरिया का किनारा ! पर तपस्वी को इस में भी कष्ट न था ।

सेवक दो बार तो डरकर कोरा लौट गया, तीसरी बार कई इकट्ठे हो कर आए । पर ज्यों स्वामी जी ने हूं शब्द किया, और पांव भूमि पर मारा कि कौन हैं ? वहीं तलवार हाथ से छूट गई और वह धूर्त भाग गए ।

कर्णवास के ठाकुरों और अन्य लोगों ने कहा कि हम राव को सीधा किए देते हैं, पर स्वामी जी ने रोक दिया ।

किसी ने समझाया—अब सावधान रहो ।

आप बोले—

नैनंछिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः

अर्थात इस (आत्मा) को न शस्त्र काट सकते हैं, न आग जला सकती है—कोई आएगा तो क्या बिगाड़ेगा।

शिक्षा—

ब्रह्मचर्य के बल को न शत्रु जीत सकते हैं न शस्त्र।

योगी का तेज।

—:o:—

विपक्षियों ने मथुरा में एक और युक्ति की। जानते थे कि स्वामी का बल ब्रह्मचर्य्य ही से है, सो इसे भंग करने पर तुल आए।

एक वेश्या को गहने पहिना कर स्वामी के पास भेजा कि हो न हो इसका जादू चल जायगा। स्वामी समाधि लगाए परमात्मा का चिन्तन कर रहे थे। मुख से योग का तेज बरसता था। वेश्या एक बार डर कर बाहर निकल आई। धूर्तों ने कुछ लोभ बढ़ाकर, कुछ डर दिखाकर फिर भेजा। फिर गई तो ऐसी मुग्ध हुई कि गहने उतार रोने लगी। स्वामी जी की समाधि खुली तो अचम्भा माना।

अब वह वेश्या न रही थी। पांव पर गिरी

और अपना अपराध सुनाकर क्षमा मांगी। और आगे को पवित्र जीवन का व्रत लिया। उसने चाहा कि गहने स्वामी जी ले लें। पर वे उनके किस काम के थे ? उनका तो व्रत था कि लंगोट के बिना कुछ रखना नहीं है। गहने लौटा दिए और आशीर्वाद दी—परमात्मा करे, तू आगे को सदैव पवित्र बनी रहे।

शिक्षा

योगी का तेज पाप-नाशक है, दर्शन करने से ही पापी पवित्रात्मा बन जाते हैं।

धर्म का प्रचार सदाचार से होता है।

बाबू केशवचन्द्र सेन से भेंट।

—:o:—

स्वामी जी बङ्गाल का दौरा करते हुए कलकत्ते गए, जो उन दिनों भारत की राजधानी थी। आप के वहां कई लैक्चर हुए। ब्रह्मसमाज के नेता बाबु केशवचन्द्र सेन आप की सेवा में आते और भक्ति दर्शाते रहे।

जगद्विख्यात कवि महात्मा रवीन्द्रनाथ टैगोर के पिता म० देवेन्द्रनाथ टैगोर अपने घर में स्वामी जी के उपदेश कराकर अपने कुटुम्ब का कल्याण करते रहे।

[१]

एक दिन बाबु जी ने स्वामी जी से कहा—"यदि आप अंग्रेजी पढ़े होते तो मैं आपको इंगलैण्ड चलने की प्रार्थना करता। वहां खूब प्रचार होता"

आपने उत्तर दिया—"यदि आपको संस्कृत आती तो अपने देश-भाइयों का बहुत भला कर सकते"।

[२]

वहां ही किसी महाशय ने विनय की—"आप यह न कहें कि 'यह बातें वेद में हैं' । किन्तु यह कहें कि 'यह मुझे ईश्वर ने स्वयं कहा है' तो लोग अधिक विश्वास करेंगे"। स्वामी जी ने उत्तर दिया:—"मैं सत्य का प्रचार झूठ से नहीं कर सकता" ।

[३]

स्वामीजी अब तक लँगोट-धारी थे, बाबूजी ने समझाया, 'अब आप को नगरों में जाना है' जहां स्त्रियां भी देखेंगी । वस्त्र पहिनना उचित है' । स्वामी जी तब से कपड़े पहिनने लगे ।

शिक्षा:—

सुनो सब की, मानों धर्म की ।

धर्म्म का बुलावा ।

[१] दिल्ली दर्बार

सं० १८७७ ई० में लार्ड लिटन ने देहली में दर्बार किया, जिस में भारत भर के राजे, रईस, सब प्रान्तों (सूबों) के गवर्नर तथा अंग्रेज़ी और देशी सर्व-साधारण गण पधारे । स्वामी जी को प्रचार की धुन थी । ऐसा बड़ा मेला हाथ से जाए, यह असम्भव था । जहां राजों के कैम्प थे वहां स्वामी दयानन्द सरस्वती के डेरे की भी धूम थी ।

आपने वहां उपदेशों की झड़ी लगा दी और कई राजों महाराजों तथा प्रजा के नेताओं ने दर्शन किए और उपदेशों से लाभ उठाया ।

स्वामीजी ने वहां विशेष बात यह की कि उस

समय जो लोग भारत के सुधार का काम कर रहे थे—जैसे मुसलमानों में सर सय्यद अहमद खां, ब्रह्मसमाज के केशवचन्द्र सेन, नवीन चन्द्रराय और हरिश्चन्द्र चिन्तामणि तथा हिन्दुओं में कन्हैयालाल अलखधारी और मु० इन्द्रमणि-इन सब को अपने डेरे पर बुलाया। और कहा—"अलग अलग काम करने से क्या बनाया है? सब वैदिक धर्म को मान कर एक साथ काम करो"। शोक है कि वे महाशय वैदिक धर्म को न मान सके, और एक न हुए।

वे महाशय सब दूसरे मतों के थे, परन्तु स्वामीजी का इन पर ऐसा प्रभाव पड़ा, कि मरते तक उनकी स्तुति करते रहे।

—:०:—

[२]

मेला चान्दापुर

इसके पश्चात् कई सज्जनों ने चान्दापुर ग्राम में मेला किया, और मुसलमानों, ईसाइयों और वैदिक धर्म्मियों को बुलाया, कि आपस में धर्म्म विचार करें। मुसलमानों की ओर से मौ० मोहम्मद कासिम, ईसाइयों की ओर से पादरी नोबल, और वैदिक धर्म्मियों की ओर से स्वामीजी ने सम्वाद किया। तीनों के हस्ताक्षरों से वहां का सम्वाद छप गया। उसे पढ़ने से पता लगता है कि वैदिक सिद्धान्तों के आगे किसी और मत की नहीं चल सकती।

शिक्षाः—

सच्चाई छिपाने के लिये नहीं, फैलाने के लिये है। यत्न करो कि सारा संसार वैदिक धर्म्मी होजाए।

पूने का स्वांग।

संयुक्त प्रान्त और बंगाल में धर्म्म का उपदेश कर, स्वामीजी बम्बई गए। इसी प्रान्त का एक भाग गुजरात है, जहां आप का जन्म हुआ था।

[१] बम्बई—

बम्बई नगर में आपने पहिली समाज स्थापित की। अहमदाबाद आदि स्थानों में भी आपके लैक्चर हुए। शास्त्रार्थ का प्रबन्ध भी हुआ, पर दूसरे पक्ष वाले टालते रहे। आचार्य्य कंवलनयन, जो वल्लभ मत के गद्दीदार थे, और अच्छे विद्वान् गिने जाते थे, सभा में आए कि सम्वाद करेंगे। पर कुछ ऐसे घबराए कि बोले बिना उठ गए, विचार ही न होने

दिया। लोग समझ गए, कि वह किस पानी में हैं।

[२] पूना—

पूना के लोग आपके उपदेश पर ऐसे मुग्ध हुए कि एक दिन आप के मान के लिए नगर-कीर्तन किया। महादेव गोविन्द रानाडे हाईकोर्ट के जज थे। वह स्वामी के भक्त होगए। हाथी पर श्री स्वामी जी महाराज बैठे। आगे बाजे गाजे और भजन होते थे। जनता तथा जज महोदय साथ थे। इस प्रकार सारा नगर फिरे।

शत्रुओं को यह देख आग लग गई। दूसरे दिन एक आदमी का मुंह काला कर गधे पर चढ़ाया। उसे गाली भी देते जाएं, पत्थर भी फैंकते जाएं। और नाम लें स्वामी का।

आर्य्यों के पास हाथी था, भजन थे, बाजे थे, उन्होंने यह सजधज दिखाई। विपत्तियों के

पास गधे थे, गालियां थीं, पत्थर थे, उन्होंने उसी से नगरकीर्तन किया।

किसी भक्त ने स्वामी जी को सूचना दी कि बाज़ार में यह रामरौला है। स्वामी जी हंसे और एक एक बात का उत्तर अत्यन्त उदारता से दिया, जो सुनने योग्य है।

भक्त—विपत्ती आपको गालियां देते हैं।

स्वामी—अच्छा है, गालियों से पेट खाली हो लेगा तो अच्छे शब्द कहेंगे; सो इसमें मेरी कीर्ति है।

भक्त—एक आदमी का मुख काला कर, गधे पर चढ़ा दिया है और आपके नाम से पुकारते हैं।

स्वा०—सच्चे दयानन्द को कोई कालक नहीं लगी और बनावटी दयानन्दों का मुंह काला होना ही हुआ।

भक्त—आपका नाम लेले कर पत्थर फेंकते हैं।

स्वा०—कल पत्थर पूजते थे, आज फेंकते हैं सो मेरी बात मान गए।

भक्त—आपको जन्म से नीच कहते हैं।

स्वा०—मैं भी तो यही कहता हूँ कि जन्म से सब नीच हैं। जिस ने पढ़ा पढ़ाया वह ब्राह्मण हो गया, धर्म्म के लिये लड़ा तो क्षत्रिय हुआ। व्यापार या खेती की तो वैश्य हुआ। नहीं तो शूद्र। मैंने ब्राह्मण के यहां जन्म लिया था। ब्राह्मण के बेटे को जन्म से नीच माना तो मेरे ही सिद्धांत पर आए, मुझे तो यह बात सुनकर प्रसन्नता हुई है।

इस प्रकार दुर्वचनों के साथ अच्छे अर्थ लेते रहे और क्रोध न किया।

शिक्षाः—

गाली से चिढ़ना नहीं चाहिए। न गाली का उत्तर गाली में देना चाहिए। किन्तु प्रेम-पूर्वक बर्ताव कर शत्रु को जीतना चाहिए।

फूलों की वर्षा

--:o:—

पंजाब प्रान्त की बारी उस समय आई, जब स्वामी का लोहा संसार मानने लगा था । फिर भी हम घाटे में नहीं रहे । इस प्रान्त में आकर स्वामी जी ने बहुत समाज खोले ।

अमृतसर

दुष्ट लोग यहां भी न टले । अमृतसर में व्याख्यान हो रहा था कि विपक्षी बीच में आ कूदे । उन्हें मान-पूर्वक बिठाया । उन के साथ गुंडों की सेना थी । थोड़ी देर चुप रहे । फिर सभा में खलबली डालने को ईंट पत्थर फेंकने लगे । स्वामी जी को एक भी न लगा, पर और कई भले मानसों को चोट आई । स्वामी जी ने सब को धैर्य्य देते हुए कहा—

आज जहां ईंट पत्थर बरसते हैं, वहां किसी दिन फूल बरसेगें।

बात सच्ची थी। अब जहां कहीं स्वामी के भक्त जाते हैं उन पर फूलों की वर्षा होती है।

वज़ीराबाद

वज़ीराबाद में स्वामी जी पर पत्थर पड़े थे। एक रोड़ा ठीक माथे पर लगा और लहु बहने लगा। स्वामी जी ने रूमाल से पोंछ दिया और उपदेश देते रहे।

शिक्षा---

धर्म्म के प्रचार के लिये पत्थरों की चोटें फूलों की कलियां हैं।

ब्रह्मचारी का बल

[१]

लन्धर में सर्दार विक्रमसिंह जी ने स्वामी जी से कहा, कि सुना है ब्रह्मचारी बहुत बलवान् होता है।

स्वामी–हां शास्त्रों में भी लिखा है और बात भी ठीक है।

सर्दार–इसका प्रमाण ?

स्वामी जी–चुप हो रहे।

सायंकाल सर्दार जी बग्घी पर चढ़े। साईस ने जितना ज़ोर लग सका लगाया, घोड़े आगे न हिल सके। पीछे देखा तो स्वामी जी ने पकड़ा हुआ है।

स्वामी जी ने बग्घी छोड़ दी और कहा–लो ब्रह्मचर्य्य का प्रमाण।

[३]

ऐसे ही गुजरांवाले में व्याख्यान देते हुए आप ने गरज कर कहा था कि जिसे अपने बल का भरोसा हो, मेरे उठे हुए बाहु को नीचा करे। वहां कई कश्मीरी पहलवान थे। किसी को साहस न हुआ कि उत्तर दे।

शिक्षा----

लंगोटे का बल सब से बड़ा है।

सच की जय

[१]
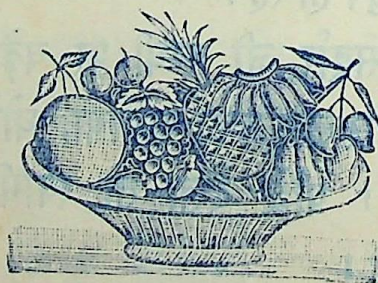
स्वामी जी जहां पुराणों के दोष दिखाते थे, वहां इञ्जील, कुरान का भी खण्डन करते थे। अमृतसर में ईसाई मत के दोष दिखाए तो पादरियों ने खड़गसिंह को बुलाया कि स्वामी को जवाब दे। खड़गसिंह १२ वर्ष से ईसाई हो चुका था और ईसाई मत का प्रसिद्ध प्रचारक था।

बाहर से आते ही खड़गसिंह सीधा स्वामी जी के स्थान पर पहुंचा और झट आर्य्य हो गया। ईसाइयों से फिर मिला ही नहीं। पादरी महाशय मुंह ताकते रहे।

ऐसे ही और भी जो लोग धर्म से पतित हो चुके थे, स्वामी का उपदेश सुन फिर धर्म की शरण आए।

[२]

उन्हीं दिनों मिशन स्कूल में "पुनर्जन्म" पर सम्वाद हुआ। मास्टर ज्ञानचन्द्र वहां अध्यापक थे। आपने आर्य्य सिद्धान्त की पुष्टि की, कि जीव मर कर फिर जन्म पाता है और पहिले भी पाता रहा है। बात सच्ची थी। पर ईसाईयों के अनुकूल न थी, इस पर आप को स्कूल छोड़ना पड़ा। आपने दुकान निकाल ली, पर धर्म न छोड़ा।

शिक्षाः—

नौकरी छोड़ो, धर्म न छोड़ो।

वद का अधिकार

—:०:—

ड़की में स्वामी जी के व्याख्यान में एक मज़हबी आ बैठा। मज़-हबी वे होते हैं जो अपने हाथ से पशुओं को मारते हैं। ये लोग अशुद्ध समझे जाते हैं। किसी ने उस से घृणा कर ऊंचे स्थान से उठा दिया। वह किसी दूसरे स्थान पर जा बैठा। यहां फिर किसी ने उठा देना चाहा। इस पर स्वामी जी ने रोका और कहा—बैठने दो। धर्म्म की बात है, सब सुन सकते हैं, जैसे वायु सब का, वैसे वेद सब का। जैसे सूर्य्य की ज्योति सब की, तैसे वेद सब का।

कर्णवास के ठाकुर गोपालसिंह जी आदि अ

के शिष्य थे। उनकी ताई ९० वर्ष की बुढ़िया थी, कई गांव उनके अधिकार में थे। परन्तु वह खाती जौ ही की रोटी थी। वह स्वामी जी के दर्शन को आई। और पूछा, मेरी मुक्ति क्योंकर हो? स्वामी ने गायत्री का उपदेश किया कि इस मन्त्र का जाप किया करो। यही मंत्र आर्य धर्म का सार है।

शिक्षा---

वेद का अधिकार छोटे बड़े, स्त्री पुरुष सब को है।

सच की जय
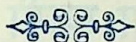
सं० १९३० वि० में फिर हरिद्वार पर कुम्भ हुआ। स्वामीजी ने फिर वहां डेरा किया। सवेरे लोग हरकी पौड़ी पर स्नान करते सायंकाल स्वामी जी की कुटी पर भीड़ रहती। वहां शरीर शुद्ध, यहां आत्मा शुद्ध।

[१]

आनन्दवन नाम के एक सन्यासी थे, वह शिष्यों सहित स्वामी जी की सेवा में आए। पहिले वह जीव और परमात्मा को एक मानते थे। स्वामी जी के साथ विचार हुआ तो उन्हें निश्चय हुआ कि जीव और है, ब्रह्म (परमात्मा) और जीव हम हैं जो थोड़ा जानते, थोड़ा कर सकते और थोड़े में रहते हैं। परमात्मा सब कुछ जानता,

सब कुछ कर सकता, सब जगह रहता है, कितना भेद है ? यही शित्ता स्वामी ने आनन्दबन को और आनन्दबन ने अपने शिष्यों को दी ।

(२)

दो नांगे स्वामी के स्थान पर आए, और स्वामी जी को गालियां देने लगे । स्वामी जी हंसे और बड़े प्रेम से बुलाया । दूसरे दिन वे भक्ति से आए और शित्ता ली । तब उन्होंने कपड़े पहने और माला आदि तोड़ दी ।

शिक्षा—

प्रेम से शुत्रु भी मित्र हो जाते हैं ।

निडर सन्यासी ।
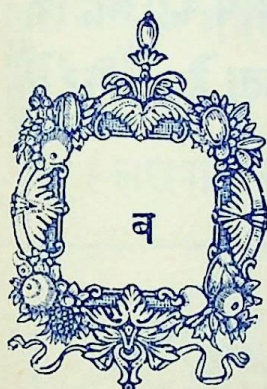
रेली में लैक्चर देते हुए स्वामी जी ने कहा था कि महात्मा ईसा की मां कुंवारी कैसे रही ? कमिश्नर महोदय लैक्चर में थे । इसाई होने से उन्हें यह बात बुरी लगी ।

स्वामी जी खज़ानची की कोठी पर उतरे थे । कमिश्नर ने खज़ानची जी से स्वामी जी के समझाने को कहा । खज़ानची जी स्वामी जी के पास आते डरे । अन्त को उन्होंने स्वामीजी से एक दो शब्द कहे, जो थे तो अर्थ-सहित ही, पर स्वामी जी ताड़ गए, कि कमिश्नर ने बुरा माना है ।

दूसरे दिन फिर व्याख्यान में कमिश्नर आए । स्वामी जी ने ललकार कर कहा—"कोई रूठे,

चाहे माने, मुझे सत्य कहना है। राव से भी सत्य, रंक से भी सत्य। पहिले मुझे निश्चय कराओ, कि कोई मेरी आत्मा को मार सकता है। फिर मैं सोचूंगा कि क्या सच छिपाऊं?"

शिक्षा----

सच कहने में डर क्या ?
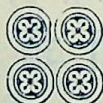
कीचड़ में फंसे हुए बैल।

इस समय स्वामीजी की प्रतिष्ठा का क्या कहना ! स्थान स्थान पर समाज खुल गए। लखपति भक्त बन गए। जहां आंख उठाएं,
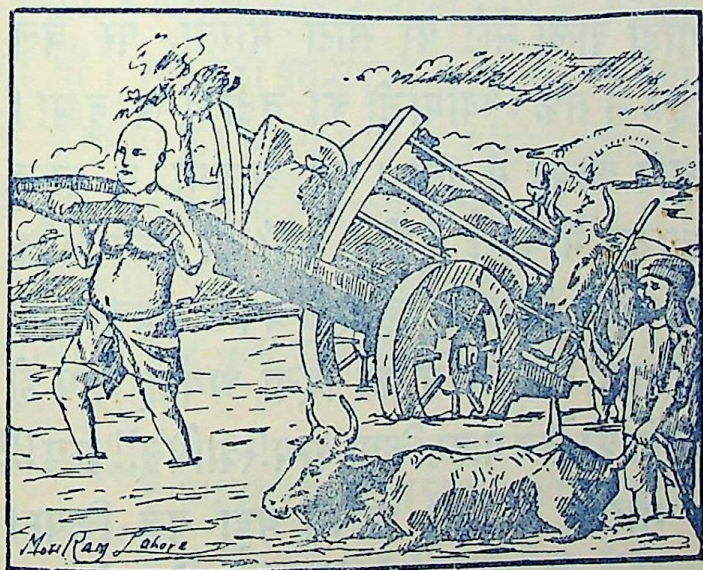
(कीचड़ में फंसी गाड़ी को निकाल रहे हैं।)

राजे हाथ बांध सेवा पूछते थे। फिर भी स्वामी की सरलता देखो ! न अभिमान आया, न

आलस्य हुआ। उलटा प्राणिमात्र से प्रेम बढ़ गया और काम पहिले से अधिक करने लगे।

जब अन्तिम बार काशी गए, तो एक दिन सैर से लौटते हुए एक गाड़ी देखी, जो कीचड़ में धंसी थी, बैल भी वहीं फंसे खड़े थे। गाड़ी वाला सोटे पर सोटा मारता, पर बैल हिल न सके। स्वामाजी को बड़ा दुःख हुआ। आप कीचड़ में उतरे। बड़े आदमी थे, परन्तु उपकार में बड़ाई कैसी? बैलों की दुहरी शक्ति ने जो न किया था वह एक अकेले ब्रह्मचारी की भुजाओं ने सहज में कर दिया अर्थात् आप ही गाड़ी को खैंच बाहर किया धन्य! स्वामिन्!! धन्य!!!

गोरक्षा के लिए आपने बड़ा यत्न किया। गवर्नरों से कहा, अंग्रेज़ों तक को गोरक्षक बनाया। पुस्तक लिखे, प्रजा में प्रचार किया।

शिक्षा—

प्राणी मात्र पर दया करो।

धर्म्म या धन

—:o:--

राजपूताने में स्वामी जी पहिले कई बार पधारे थे। पुष्कर में प्रचार किया था और जगहों में गये थे, राजा प्रजाको धर्म्म की शिक्षा दी थी। अब वहां इस उद्देश्य से पहुंचे, कि वहां के राजाओं को आर्य्य बना के रहूंगा। उदयपुर, जोधपुर आदि के राजे आपके शिष्य बन गए और जैसी आज्ञा पाई, वैसा ही आचरण करने लगे। स्वामीजी यदि कुछ और समय वहां रहते तो सब सुधर जाते।

गद्दी की भेंट

उदयपुर के राजा ने एक बार अकेले में बिनती की कि स्वामिन्! मेरा राज्य महादेव के मन्दिर के अधीन है। यदि आप मूर्ति का खण्डन छोड़ वहां के महन्त बन जाएं, तो कई लाख की जागीर उस मंदिर के साथ है

वह आप की होगी, और राज्य के भी धार्मिक अधिराजा आप होंगे। स्वामीजी चुपके-चुपके सुनते रहे। जब राजाकी बात समाप्त हुई, तो मुंह लाल हो गया क्रोध में आकर कहाः—

"राजन्! तुझे राजा होने का अभिमान है। तेरी रियासत से मैं एक दौड़ में पार हो सकता हूं। फिर तू मेरा क्या करेगा? मैं परमात्मा के राज्य को कैसे छोड़ूं? जो सब जगह है उससे कैसे निकलूं? वह सर्वशक्तिमान् है। वह सब कुछ कर सकता है, मैं उसकी आज्ञा मानूं या तेरी!

राजा यह धमकी सुन कर चुप था, बोला-मैंने तो परखने को बात बनाई थी। पर आप धन्य हैं, आपको न लोभ गिरा सकता है न भय।

शिक्षा—

धन छोड़ो, धर्म्म न छोड़ो।

स्मारक

कवि श्यामदास ने बातों में कहा—स्वामिन्! आपने कितना उपकार किया है। जी चाहता है प्रातः सायं आपका दर्शन करें। आप कहीं चले जाते हैं तो आपके सेवक आपकी मोहनी छवि को तरसते हैं। आपका स्मारक (यादगार) होना चाहिये अर्थात् मूर्ति (स्टेचू) बनाई जाएं, तो जहां आपके भक्त दर्शन पाएंगे, वहां प्रजा को कई प्रकार की शिक्षा मिलेगी।

आपने उत्तर दिया—नहीं, मरने के पीछे मेरी भस्म को भी किसी खेती में डालना कि खाद के काम आए। इन्हीं स्मारकों से ही मूर्ति पूजा चली है। मेरी मूर्ति बनवा कर उसे भी पुजवाना है क्या?

शिक्षा

काम रहेगा; नाम न रहे तो कोई बात नहीं।

मातृ-शक्ति

राजपूताने में जगह जगह पर चबूतरे बने हुए हैं; और उन्हें देवताका स्थान समझ कर पूजा जाता है। उस पर वृक्ष भी होता है, जैसे यहां पीपल। एक चबूतरे के आगे जाते हुए आप का सिर झुका और फिर आप आगे चले।

किसी ने कहा—आप देवता को मानें न माने, देवता ने सिर झुकवा ही लिया।

स्वामीजी ठहर गये। कुछ लड़के खेल रहे थे, उनमें एक लड़की भी थी। स्वामीजी ने उस की ओर अंगुली की, और कहा—"यह मातृ-शक्ति है, इसी से सब जन्म पाते हैं, इसके आगे झुकना चाहिये"। यह सुनते ही सब के रोम खड़े हो गये और आदर से सिर झुक गया।

शिक्षाः—

स्त्री-जाति अर्थात् माता, बहिन लड़की धर्मपत्नी, तथा अन्य स्त्रियों का मान करो।

ईश्वरेच्छा

जोधपुर जाते हुए किसी ने कहा था कि स्वामिन् ! "यह गंवारों का देश है। लोग समझैंगे कुछ नहीं, और मुफ्त में प्राण हर लेंगे"। स्वामीजी ने उत्तर दियाः—"गंवारों को समझाना ही मेरा मुख्य काम है। तुम कहते हो मार देंगे, यदि जीते हुए की एक-एक अंगुल को काटें और जला कर बत्ती का काम लें, तो जीना सफल होगा"।

राजा ने ही आप को बुलाया था। गए तो शिष्य बन गया, और राजधर्म पढ़ता रहा। उस का आचार भी सुधरने लगा।

स्वामीजी ने सुना कि राजा ने वेश्या रखी हुई है। एक दिन दर्बार में वेश्या की पालकी देख पाई। रहा न गया, स्पष्ट कहा-कि शेर को कुतिया का

सङ्ग बहुत बुरा है। पत्र लिखकर भी समझाया।

राजा पर तो प्रभाव अच्छा पड़ा, वह वैश्या से विमुख होगया। पर वैश्या वैरिणी हो गई। उसने कई राजमंत्रियों को गांठा और शत्रु मण्डली बना ली। सलाह हुई कि स्वामी को विष दी जाए।

स्वामी के पाचक (रसोईये) को रुपया देकर ऐसा कराया गया। स्वामी जी को विष चढ़ गया और वह रोगी हो गए। तमाशा यह कि जो डाक्टर औषधि देने को आया वह भी उसी शत्रुमंडल से मिला हुआ था। स्वामी का हाल दिनों दिन बिगड़ता गया। दिन में बीसियों दस्त आते, शरीर दुर्बल हो गया। क्षण-क्षण में मूर्छा आने लगी। पेट से लेकर मुख तक शरीर के भीतर और बाहर सारे शरीर पर ही, छाले होगए। न बोला जाता, न सांस लिया जाता। कष्ट का कुछ ठिकाना न

था । वैद्य अचंभे में थे कि यह जीते किस तरह हैं । स्वामी का दिल देखना कि महीने से कुछ ऊपर इस हाल में रहे, पर हाय नहीं की, चुपचाप सह गए ।

जोधपुर से आबू आए तो पालकी पर, वहां से अजमेर गए तो पालकी पर। अजमेर में एक दिन हजामत कराई। शरीर साफ़ कराया। उठ कर प्रार्थना की, वेद-मन्त्रों का पाठ करते रहे। अन्त को यह कहा, ईश्वर ! तेरी इच्छा पूर्ण हो। ऐसा कह प्राण निकाल दिए। उस समय उनकी आयु उनसठ वर्ष की थी ।

शिक्षाः--

कष्ट में हाय न करो। उसे सहो । मृत्यु आए तो हंसते हुए मरो।

—:o:—

दयानन्द की दया।

कई वर्ष बाद स्वामी जी का मारने वाला प्रगट हुआ था। उसने बताया कि स्वामी
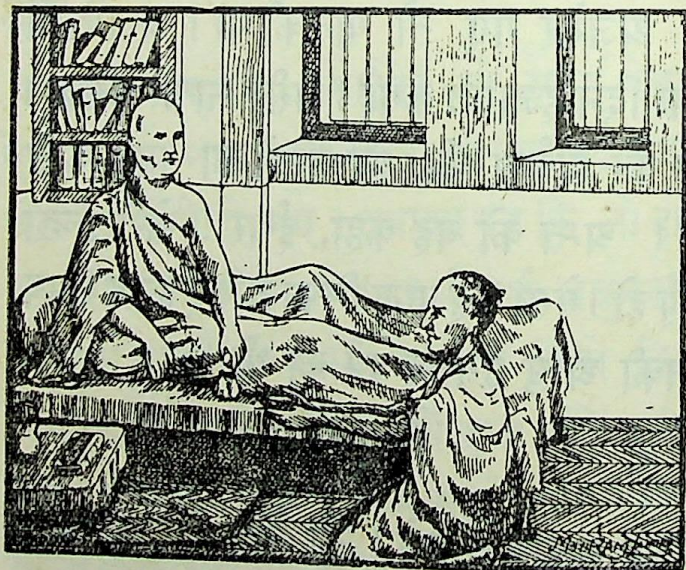
हत्यारे को रुपये दे रहे हैं।

जी को पता था कि मैंने ही विष दी है। मैंने उन

के सामने अपराध माना और पांव पर गिरा कि "क्षमा करो, मर तो मैं जाऊंगा ही; आप क्षमा करदें तो संतोष से मरूंगा"। आपने मुझे उठाया, पानी दिया और रुपये दिये कि "ले नैपाल देश भाग जा, वहां तुझे कोई न पकड़ेगा, यहां रहा तो मार देंगे। मुझे विष धीरे धीरे चढ़ेगा। सो किसी को शंका न होगी"।

वीरता देखना कि स्वामी ने मरते दम तक यह भेद किसी को नहीं बताया। क्षमा का यह अन्त है। संसार भर में पैगम्बर भी हुए हैं, अवतार भी हुए हैं, किसी न ऐसी क्षमा नहीं दिखाई।

मारने वाले का नाम जगन्नाथ था। वह नैपाल गया। फिर भारत आया और भगवे वेष में यहां फिरा। तब तो बिलख बिलख कर रोता था कि हाय मैंने कैसे महात्मा को मारा। मैंने उन्हें विष दी। उन्होंने मुझे जीवन दिया।

शिक्षाः--

दयानन्द की दया सी और कोई नहीं । ऐसी दया धारण करो ।

हमारा काम ।

—:०:—

स्वामी जी यहां से गए । पर उनकी शिक्षा इसी लोक में जीती है ।

आओ ! उस सच्ची शिक्षा को धारण करें, वेद पढ़ें, स्वामी जी ने जो वेद भाष्य किया है उसे पढ़ें और सारे संसार में स्वामी के पुस्तक फैलाएं ! स्वामी जी हमारे लिए मरे ! हम उनके लिए जिएं !

शिक्षा---

स्वामी जी जैसे काम करके हम भी वैसे स्वामी बन सकते हैं !

कांगड़ी।

सच्चाई के

हुआ करते

काश का यह

निवृत्ति की

है। यदि

नें तो उनके

ज़,

आर्य पुस्तक विक्रेता,

अनारकली लाहौर।